



Neutral Citation No. - 2026:AHC-LKO:22615

उच्च न्यायालय इलाहाबाद, लखनऊ

दांडिक अपील संख्या.- 2272/2007

माता फेर एवं 3 अन्य

.....अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रतिवादी(गण)

अपीलार्थी(गण) के अधिवक्ता

:- प्रेम शंकर, प्रणव पांडे

प्रतिवादी(गण) के अधिवक्ता

:- शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या. - 12

माननीय न्यायमूर्ति मनीष माथुर

1. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री प्रणव पांडे एवं प्रतिवादी-राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।

2. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अंतर्गत प्रस्तुत यह दांडिक अपील, अपर सत्र न्यायाधीश (त्वरित न्यायालय-1), अम्बेडकर नगर द्वारा सत्र विचारण संख्या 61/2006, राज्य बनाम माता फेर एवं अन्य, जो कि वाद अपराध संख्या 171/2005, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 323/504/336/308 एवं 325, थाना मालीपुर, जनपद अम्बेडकर नगर से उद्भूत है, में पारित

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

निर्णय एवं आदेश दिनांक 19.09.2007 के विरुद्ध योजित की गई है, जिसके द्वारा अभियुक्तगण-अपीलार्थियों को निम्नवत् रूप से दोषसिद्ध एवं दण्डित किया गया है:-

(i) धारा 308 सहपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत तीन वर्ष के कठोर कारावास से दण्डित किया गया।

(ii) धारा 323 सहपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत छह माह के साधारण कारावास से दण्डित किया गया।

(iii) धारा 336 सहपठित धारा 34 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत दो माह के साधारण कारावास से दण्डित किया गया।

(iv) समस्त सजाएँ साथ-साथ चलेंगी।

3. अभियोजन कथानक के अनुसार, घटना दिनांक 18.09.2005 की बतायी गयी है, जब सूचनाकर्ता के बच्चों एवं उनके पड़ोसी अपीलार्थियों के मध्य साधारण कहासुनी हुई। परिणामस्वरूप, यह कथित है कि अपीलार्थीगण सूचनाकर्ता के घर में घुस आये तथा उस एवं उसके परिवारजनों पर आक्रमण किया, जिससे उन्हें गंभीर चोटें आयीं। फलस्वरूप, उसी दिन प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कर वाद अपराध संख्या 171/2005, धारा 323, 504, 336, 308 एवं 325 भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत पंजीकृत किया गया, जिसमें विवेचना उपरांत आरोप-पत्र भी प्रेषित किया गया। तत्पश्चात् संज्ञान ग्रहण किया गया तथा आक्षेपित निर्णय के माध्यम से अपीलार्थीगण को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 325, 34 एवं 504 के आरोपों से दोषमुक्त करते हुए अन्य धाराओं में दोषसिद्ध किया गया।

4. अभियुक्त-अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने में त्रुटि की है, क्योंकि अभियोजन पक्ष अपना मामला उचित संदेह से परे सिद्ध करने में विफल रहा है और विशेष रूप से इसलिए

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

क्योंकि गवाह हितबद्ध साक्षी थे। यह प्रस्तुत किया गया है कि कथित अपराध का कोई भी स्वतंत्र गवाह नहीं था। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क को दर्ज करने के बावजूद कि अपीलार्थी अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के अंतर्गत लाभ पाने का हकदार था, निर्णय में इस संबंध में कोई चर्चा नहीं की गई है।

5. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया है कि अपीलार्थी को पूर्व में किसी भी अपराध के लिए सिद्धदोष नहीं ठहराया गया है और उन्होंने शुरुआत में ही यह प्रस्तुत किया है कि वह इस मामले में गुण-दोष पर बहस नहीं कर रहे हैं और न ही दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं आदेश को चुनौती ही दे रहे हैं, बल्कि वह अपने तर्क को केवल सजा के आदेश के संबंध में ही सीमित रख रहे हैं।

6. यह प्रस्तुत किया गया है कि आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से यह प्रकट होगा कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत परिवीक्षा का लाभ दिए जाने का तर्क उठाए जाने के बावजूद, और चूंकि अपीलार्थी का कोई पिछला आपराधिक इतिहास नहीं था, फिर भी बिना कोई कारण बताए उक्त लाभ देने से इनकार कर दिया गया है।

7. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के उपरोक्त तर्कों को दृष्टिगत रखते हुए, यह अपील जहाँ तक आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि के आदेश से संबंधित है, खारिज की जाती है। अधीनस्थ न्यायालय द्वारा निर्णय और आदेश दिनांक 19.09.2007 को पारित दोषसिद्धि की, एतद्वारा पुष्टि की जाती है।

8. अभियुक्त-अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता, ने यह प्रस्तुत किया है कि उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, जिसमें यह तथ्य भी शामिल है कि अपीलार्थी को पूर्व में किसी भी अपराध के लिए सिद्धदोष नहीं ठहराया गया है, विचारण न्यायालय को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (इसके पश्चात 'अधिनियम, 1958' के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों को

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

लागू करना चाहिए था। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी को दंडादेश देते समय न तो अधिनियम, 1958 के प्रावधानों को और न ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के प्रावधानों को ही लागू किया है। आक्षेपित निर्णय में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 के प्रावधानों का लाभ न देने का कोई विशेष कारण भी दर्शित नहीं किया गया है।

9. संहिता की धारा 361 को लाभकारी प्रावधानों के साथ या उनके बिना लागू किया जाना आवश्यक है, अर्थात् संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 के प्रावधान। यदि न्यायालय इनमें से किसी भी प्रावधान को लागू न करने का विकल्प चुनता है, तो उसे उस स्थिति में लाभकारी प्रावधान लागू न करने के विशेष कारण देना आवश्यक है, जहाँ अभियुक्त अपराधी अन्यथा संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 की धारा 3 या 4 के प्रावधानों के लिए पात्र है।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी के पास लाभकारी विधान, अर्थात् अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत लाभ का दावा करने का वैधानिक अधिकार है और न्यायालय का यह कर्तव्य था कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अंतर्गत अनिवार्य रूप से धारा 360 दंड प्रक्रिया संहिता या अधिनियम, 1958 की धारा 3 या 4 की प्रयोज्यता पर विचार करे। यदि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 या अधिनियम, 1958 के प्रावधानों को लागू नहीं किया गया था, तो न्यायालय को उसके लिए कारण अभिलेखित करने चाहिए थे। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया गया है कि उस सीमा तक, आक्षेपित निर्णय और आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के प्रावधानों का उल्लंघन होने के कारण गंभीर अवैधता से युक्त है, इसलिए, यह धारणीय नहीं है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

11. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने दांडिक अपील का विरोध किया है, हालांकि उन्होंने स्वीकार किया कि इस पहलू पर कुछ भी प्रतिकूल नहीं है कि अपीलार्थी का कोई पिछला आपराधिक इतिहास नहीं है। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360/361 के प्रावधानों के संदर्भ में, यह न्यायालय लाभ प्रदान करने पर विचार कर सकता है। हालांकि, यह स्वीकार किया गया है कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के लाभ के संबंध में तर्क उठाया गया था, किन्तु उस पर विचार नहीं किया गया है।

12. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने और अभिलेख पर मौजूद सामग्री के परिशीलन के पश्चात, चूंकि वर्तमान में केवल अच्छे आचरण के लिए परिवीक्षा के पहलू पर न्यायनिर्णयन किया जा रहा है, अतः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर या भर्त्सना के पश्चात रिहा करने के आदेश से संबंधित हैं। ये धाराएं यह प्रावधान करती हैं कि जहाँ 21 वर्ष से कम आयु का न होने वाला कोई व्यक्ति केवल जुर्माने से या सात वर्ष या उससे कम की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया जाता है, अथवा जब 21 वर्ष से कम आयु का कोई व्यक्ति ऐसे अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया जाता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है और अपराधी के विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि सिद्ध नहीं होती है, तो दोषसिद्धि दर्ज करने वाले न्यायालय के लिए अपराधी की आयु, चरित्र या पूर्ववृत्त और उन परिस्थितियों, जिनमें अपराध किया गया था, सहित विभिन्न पहलुओं पर विचार करना आवश्यक है। न्यायालय को अपराधी को अच्छे आचरण की परिवीक्षा पर रिहा करना चाहिए और उसे किसी सजा से दंडित करने के बजाय, यह निर्देश देना चाहिए कि उसे शांति बनाए रखने और सदाचारी बने रहने के लिए उक्त अवधि के दौरान उपस्थित होने और दंडादेश प्राप्त करने हेतु प्रतिभुओं के साथ या उनके

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

बिना बंध-पत्र निष्पादित करने पर रिहा किया जाए। ऐसी शक्तियों का प्रयोग अपील न्यायालय या उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा किए जाने का भी प्रावधान किया गया है।

13. उक्त संहिता की धारा 361 कतिपय मामलों में अभिलेखित किए जाने वाले विशेष कारणों का उल्लेख करती है कि यदि कोई अभियुक्त धारा 360 के अंतर्गत या अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अंतर्गत, अथवा बालक अधिनियम, 1960 के अंतर्गत किशोर अपराधी या किशोर अपराधियों के प्रशिक्षण या पुनर्वास से संबंधित किसी अन्य कानून के अंतर्गत लाभ पाने का हकदार है, किन्तु उसे ऐसा लाभ प्रदान नहीं किया गया है, तो न्यायालय अपने निर्णय में ऐसा न करने के विशेष कारण अभिलेखित करेगा।

14. इस विषय पर केंद्रीय विधान, जो कि अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1958 है, विशेष रूप से इसकी धारा 3 और 4, न्यायालय की कतिपय अपराधियों को भर्त्सना के पश्चात रिहा करने की शक्ति और कतिपय अपराधियों को अच्छे आचरण की परीवीक्षा पर रिहा करने की शक्ति को दर्शित करती है।

15. उत्तर प्रदेश राज्य में लागू राज्य विधान उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परीवीक्षा अधिनियम, 1938 है, जिसमें भी धारा 3 और 4 क्रमशः कतिपय अपराधियों को भर्त्सना के पश्चात और अच्छे आचरण की परीवीक्षा पर रिहा करने की न्यायालय की शक्तियों से संबंधित हैं।

16. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 और 361 की प्रयोज्यता के पहलू पर इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मिसरी लाल एवं अन्य, 1982 CrLJ 1420 में प्रकाशित, मामले में विचार किया गया था। उक्त निर्णय का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:-

"26. ...उत्तर प्रदेश में धारा 360 के प्रयोग को वर्ष 1975 के एक अध्यादेश द्वारा वापस ले लिया गया था। उस अध्यादेश को निरस्त कर दिया गया और उसके स्थान पर दंड प्रक्रिया

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संहिता (उत्तर प्रदेश संशोधन) अधिनियम, संख्या 16, वर्ष 1976 लाया गया। इस अधिनियम को 30-4-1976 को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हुई और इसे 1-5-1976 के उत्तर प्रदेश असाधारण गजट में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम की धारा 12 ने उक्त अध्यादेश को निरस्त कर दिया और यह निर्धारित किया कि ऐसे निरसन के बावजूद, अध्यादेश के अंतर्गत किया गया कोई भी कार्य या की गई कोई भी कार्रवाई इस अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत की गई मानी जाएगी, मानो यह अधिनियम दिनांक 28 नवम्बर, 1975 से प्रवृत्त हुआ हो। विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा वाद का निर्णय दिनांक 02.02.1976 को किया गया था। संशोधन अधिनियम संख्या 16/1976 की धारा 10 द्वारा संहिता की धारा 484 में संशोधन करते हुए खण्ड (घ) के उपरान्त निम्नवत खण्ड (ङ) जोड़ा गया:-

“(ङ)...संयुक्त प्रांत प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938.....उत्तर प्रदेश राज्य में प्रभावी बना रहेगातथा तदनुसार इस संहिता की धारा 360 के प्रावधान उस राज्य में लागू नहीं होंगे और धारा 361 के प्रावधान इस प्रकार लागू होंगे कि उसमें उल्लिखित केन्द्रीय अधिनियमों के संदर्भों के स्थान पर उस राज्य में प्रवृत्त तत्समकक्ष अधिनियम के संदर्भ प्रतिस्थापित माने जायेंगे।”

दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 यह उपबन्धित करती है कि जहाँ किसी मामले में न्यायालय अभियुक्त व्यक्ति के साथ धारा 360 अथवा परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के प्रावधानों के अधीन, या बाल अपराधी के साथ बाल अधिनियम, 1960 अथवा उस समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि, जो बाल अपराधियों के उपचार, प्रशिक्षण अथवा पुनर्वास से संबंधित हो, के अधीन व्यवहार कर सकता था, किन्तु उसने ऐसा नहीं किया, तो वह ऐसा न करने के विशेष कारण अपने निर्णय में अभिलिखित करेगा।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उपरोक्त प्रावधान को ऊपर उल्लिखित धारा 484 के खण्ड (ड) के साथ पढ़ने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938 के लाभ का विस्तार न किये जाने के विशेष कारण अभिलिखित करे।”

17. इस प्रकार, उन भौगोलिक क्षेत्रों में जहाँ उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम को प्रभावी बनाया गया है, वहाँ उसी के प्रावधानों का पालन किया जाएगा न कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 का पालन किया जाएगा। इस प्रकार, किसी विशेष क्षेत्र में परिवीक्षा अधिनियम का प्रवर्तन, उस विशिष्ट क्षेत्र में संहिता की धारा 360 के प्रावधानों की प्रयोज्यता को अपवर्जित करता है, हालांकि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 361 के अंतर्गत प्रावधानित किए गए अनुसार, यह न्यायालय का अनिवार्य कर्तव्य होगा कि वह इस बात पर विचार करे कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम का लाभ क्यों न प्रदान किया जाए।

18. जहाँ तक अभियुक्त-अपीलार्थी को परिवीक्षा अधिनियम का लाभ प्रदान करने की वांछनीयता का प्रश्न है, सीताराम पासवान एवं अन्य बनाम बिहार राज्य, AIR 2005 SC 3534 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नवत व्यवस्था दी है:-

“इस विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते समय न्यायालय को वाद की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति तथा अपराधी के चरित्र पर विचार करना आवश्यक है। अपराध की प्रकृति पर विचार करते समय न्यायालय को अपराध की गंभीरता तथा उससे पीड़ित पर पड़े प्रभाव का यथार्थवादी दृष्टिकोण से मूल्यांकन करना चाहिए। परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अधीन अभियुक्त को उपलब्ध लाभ, उक्त प्रावधानों में निहित सीमाओं के अधीन है तथा “सकता है” शब्द स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि अपराध की प्रकृति, अपराधी के चरित्र तथा वाद की समस्त परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए अपराधी को परिवीक्षा अधिनियम की धारा 3 अथवा 4 के अधीन रिहा किया जाये अथवा नहीं, इसका विवेक न्यायालय में निहित है। परिवीक्षा अधिनियम

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

की धारा 4 के अधीन शक्तियाँ न्यायालय में तब निहित होती हैं, जब कोई व्यक्ति ऐसे अपराध का दोषी पाया जाता है जो मृत्युदण्ड अथवा आजीवन कारावास से दण्डनीय न हो। उक्त शक्ति का प्रयोग न्यायालय दोषसिद्धि दर्ज करते समय कर सकता है और यदि न्यायालय यह उपयुक्त समझे कि वाद की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति तथा अपराधी के चरित्र सहित अन्य तथ्यों को देखते हुए अभियुक्त को उक्त लाभ प्रदान किया जाना चाहिए, तो न्यायालय इस शक्ति का प्रयोग अपीलीय अथवा पुनरीक्षण स्तर पर भी कर सकता है तथा यह न्यायालय भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अपील की सुनवाई करते समय इस शक्ति का प्रयोग कर सकता है।”

19. मोहम्मद हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, AIR 2017 SC 660 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नवत अभिमत व्यक्त किया:-

“20. ...रतन लाल बनाम पंजाब राज्य, AIR 1965 SC 444 में, न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने बहुमत की ओर से बोलते हुए इस प्रकार विचार व्यक्त किए:-

“यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार की आधुनिक उदार प्रवृत्ति की प्रगति में एक मील का पत्थर है। यह इस सिद्धांत की मान्यता का परिणाम है कि आपराधिक विधि का उद्देश्य व्यक्तिगत अपराधी को दंडित करने से अधिक उसमें सुधार करना है। मोटे तौर पर कहा जाए तो, यह अधिनियम 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों और उससे अधिक आयु के अपराधियों, तथा मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध करने के दोषी अपराधियों और कम गंभीर अपराध के दोषी अपराधियों के बीच अंतर करता है। जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु के अपराधियों के मामले में, अधिनियम के उचित प्रावधानों में निर्धारित शर्तों के अधीन, उन्हें भर्त्सना के बाद या अच्छे आचरण की परीक्षा पर रिहा करने का पूर्ण विवेक न्यायालय को दिया गया है, वहीं 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के मामले में न्यायालय को यह व्यादेश

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दिया गया है कि वह उन्हें तब तक कारावास की सजा न सुनाए जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधियों का चरित्र भी शामिल है, को देखते हुए उनके साथ अधिनियम की धारा 3 और 4 के अंतर्गत व्यवहार करना वांछनीय नहीं है।"

20. वर्तमान मामले में उपरोक्त प्रावधानों और निर्णयों की प्रयोज्यता पर विचार करने पर, यह स्पष्ट है कि घटना वर्ष 2005 में घटित हुई बताई गई है, जिसमें अधिकतम तीन वर्ष की सजा अधिरोपित की गई है। तब से अब तक 20 वर्ष से अधिक का समय व्यतीत हो चुका है।

21. जहाँ तक दोषसिद्धि के भाग का संबंध है, यह न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता, विपरीतता या त्रुटि नहीं पाती है, किन्तु उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त-अपीलार्थी पर अधिरोपित दंडादेश में संशोधन की आवश्यकता है।

22. निम्नवत संशोधनों के साथ यह अपील **आंशिक रूप से स्वीकृत** की जाती है:-

22.1. अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा अभियुक्त-अपीलार्थियों की दोषसिद्धि की पुष्टि की जाती है। अपीलार्थी-अभियुक्तों के दंडादेश को इस सीमा तक संशोधित किया जाता है कि उन्हें 'उत्तर प्रदेश अपराधी परिवीक्षा अधिनियम' की धारा 4 का लाभ प्रदान किया जाता है और उन्हें इस शर्त पर परिवीक्षा पर रिहा किया जाता है कि वे आज से एक वर्ष तक शांति बनाए रखेंगे और सदाचारी रहेंगे। इसके साथ ही, वे संबंधित न्यायालय के समक्ष अपने व्यक्तिगत बंध-पत्र के साथ 20,000/- रुपये की दो प्रतिभूतियाँ और इस आशय का एक वचन-पत्र प्रस्तुत करेंगे कि वे आज से एक वर्ष की अवधि के दौरान शांति और अच्छा व्यवहार बनाए रखेंगे। उपरोक्त शर्तों में से किसी भी शर्त के उल्लंघन की

स्थिति में, अपीलार्थियों को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा दिए गए दंडादेश को

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

भुगतना होगा। उपरोक्त बंधपत्र अपीलार्थियों द्वारा आज से एक महीने के भीतर संबंधित न्यायालय को सूचित करते हुए जिला परीवीक्षा अधिकारी, अंबेडकर नगर के समक्ष प्रस्तुत किए जाएंगे।

23. आदेश की एक प्रमाणित प्रति आवश्यक अनुपालन हेतु संबंधित न्यायालय और जिला परीवीक्षा अधिकारी, अंबेडकर नगर को भी तत्काल प्रेषित की जाए।

(न्यायमूर्ति मनीष माथुर)

मार्च 31, 2026

प्रभात

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु हैं और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।